International Journal of Applied Research 2020; 6(11): 01-03

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2020; 6(11): 01-03
www.allresearchjournal.com
Received: 14-09-2020
Accepted: 15-10-2020

डॉ. उपमा सिन्हा
पी-एच.डी (दर्शनशास्त्र), दर्शनशास्त्र विभाग पटना विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ. उपमा सिन्हा
पी-एच.डी (दर्शनशास्त्र), दर्शनशास्त्र विभाग पटना विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

भारतीय नीतिशास्त्र में धर्म और नैतिकता का तार्किक अंतर : एक विश्लेषण

डॉ. उपमा सिन्हा

पुरोवाक्

सभी सत्कर्म अर्थतः साधारण धर्म ही वस्तुतः धर्म का नैतिक या आन्तरिक स्वरूप है। साधारण धर्म के अतिरिक्त विशेष धर्म और आपात धर्म भी नैतिक धर्म का स्वरूप है, अतः ये दोनों धर्म भी सत्कर्म करने की प्रेरणा देते है। विशेष धर्म समाज के चार वर्णों के कर्तव्यों का निर्धारण करता है। इन कर्तव्यों को स्वधर्म कहा जाता है परंतु आपात काल में स्वधर्म का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। संकट की घड़ी में मनुष्य को अपने अस्तित्व की रक्षा करनी पड़ती है। अस्तित्व की रक्षा के लिए एक ब्राह्मण शूद्र के धर्म को भी अपना सकता है। ऐसे धर्म को आपात धर्म कहा जाता है, अर्थात् आपात धर्म विशेष परिस्थिति में अपनाया जाने वाला धर्म है।

शब्द-विज्ञान के अनुसार एथिक्स (Ethics) अर्थात् नीतिशास्त्र ग्रीक शब्द एथोस (Ethos) से लिया गया है। एथोस का अभिप्राय चरित्र (character) से है। यह चरित्र का विज्ञान है। एथिक्स का ही पर्यायवाची शब्द 'मॉरल फिलॉसफी (Moral Philosophy)' है। मॉरल शब्द लैटिन के 'मॉरेस' (Mores) से लिया गया है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग रीति-रिवाज और अब्यास के अर्थ में हुआ। इस प्रकार मॉरेल फिलॉसफी का अर्थ हुआ रीति-रिवाज, प्रचलन और अभ्यास का दर्शाना।

नैतिकता के अंतर्गत परोपकार, कर्तव्य, सत्य, अहिंसा, आदर आदि समाहित रहते है। नैतिकता सामाजिक तत्व है अतः इसके माध्यम से स्वस्थ्य समाज का निर्माण होता है। नैतिकता को अनेक विद्वानों ने निम्न प्रकार से परिभाषित किया है।

डॉ. रिकमेन ने अपनी पुस्तक 'ईयर बुक ऑफ एजुकेशन' (1912) में लिखा है कि—"नैतिकता के संबंध में छोटे रास्ते न छोटे होते है और न नैतिक। नैतिकता किसी उपजाई नहीं जा सकती वरन् यह तो अपने ढंग से तथा अपने समय से ही विकसित होती है। नैतिकता व्यवहार के किसी स्तर के अनुसार व्यवहार करना नहीं है, यह तो हमारे मस्तिष्क में स्थापित अच्छे संबंधों की जिन्हें हम सभी के व्यवहारों तथा कार्यों में देखते है इस सब की अभिव्यक्ति है।"

जिसबर्ट के अनुसार–"नैतिक नियम, नियमों की वह व्यवस्था है जो अच्छे और बुरे से संबद्ध है तथा जिसका अनुभव अंतरात्मा द्वारा होता है।"

नैतिकता की विशेषताएँ

- नैतिकता के साथ समाज की शक्ति जुड़ी होती है।
- नैतिकता परिवर्तनशील है। इसके नियम देश काल और परिस्थितियों के अनुसार बदलते रहते है।
- नैतिकता का संबंध समाज से है। समाज जिसे ठीक मानता है, वही नैतिक है।
- नैतिकता में पवित्रता, ईमानदारी और सत्यता आदि गुण होते हैं।
- नैतिक मूल्यों का पालन व्यक्ति स्वेच्छा से करता है।

अतः नीतिशास्त्र मानवीय आचरण का अध्ययन करता है और इसका संबंध मनुष्य मात्र से है।

धर्म की परिभाषा

भारतीय नीतिशास्त्र के अंतर्गत धर्म का संप्रत्यय अत्यंत महत्वपूर्ण है। डॉ. राधाकृष्ण के अनुसार "भारतीय विचारधारा में परमसत्ता के पश्चात्त दूसरा महत्वपूर्ण संप्रत्यय धर्म है।"[1] विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने धर्म को संपूर्ण हिंदी विचार के इतिहास में सर्वाधिक ग्राह्य सिद्धांत माना है।[2]

"धर्म" शब्द की व्युत्पत्ति "धृ" धातु से हुई है। "धृ" का अर्थ धारण करना है। अतः धारण करने वाला धर्म कहलाता है, इस दृष्टि से धर्म की परिभाषा तीन प्रकार से दी गई है:-

- धर्म वह है जिससे लोक का धारण किया जाय।
- संसार को धारण करने वाला धर्म है।
- धर्म वह है जिससे लोकयात्रा का सही निर्वाह हो।

अतः दूसरे शब्दों में, धर्म वही है जो समाज मनुष्य का कल्याण करें। मनुष्य का कल्याण तभी संभव है, जब मनुष्य स्वयं अपने क्रियाकलाओं को नियम के अधीन कर अपना जीवनयापन करता है। इससे समाज और संसार सुव्यवस्थित, सुसंगठित, सुनियमित और सुनियंत्रित रहते हैं। शायद इसलिये ऋग्वेद के ऋषियों ने धर्म को 'ऋतु' की संज्ञा दी है।[3] डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार सभी रिलीजन (धार्मिक सम्प्रदाय) मनुष्य को आत्मानुभूति का अनुभव करने का अवसर प्रदान करते हैं। आत्मानुभूति ही धर्म का लक्ष्य होता है, और इसी अनुभूति का आध्यात्मिक रोमांच की संज्ञा दी जाती है।

आज धर्म और रिलीजन के अर्थों को अत्यंत संकुचित कर दिया गया है। आज इन दोनों पदों को कर्मकांड, अंधविश्वास, चमत्कार, रहस्य आदि तक सीमित कर दिया गया है। वास्तव में यह धर्म के बाध्य रूप हैं।

धर्म और नैतिकता

धर्म और नैतिकता के परस्पर संबंध को लेकर नीतिशास्त्रों और धर्मशास्त्रियों के मध्य अनेक मतभेद है। विद्वानों का एक वर्ग धर्म और नैतिकता में अविभाज्य संबंध मानता है, तो दूसरा वर्ग इन पदों में कोई संबंध नहीं मानता।

धर्म का केंद्रीय विषय ईश्वर है, और ईश्वर सर्वोच्च मूल्य है। अतः नैतिकता ईश्वर के बिना असंभव है, अर्थात नैतिकता मूल्याधारित है और सर्वोच्च मूल्य है। सत्य, शिव (शुभ), सुन्दर और ईश्वर स्वयं इन मूल्यों का संवाहक ही नहीं, वरन् स्वयं सत्य, शिव और सुन्दर है। सुकरात ने ज्ञान को सद्गुण अर्थात् सर्वोच्च मूल्य माना है और ज्ञान का आरंभ ईश्वर के भय से होता है।[4] इस प्रकार ज्ञान एक नैतिक गुण के रूप में ईश्वर पर अपने अस्तित्व के लिए निर्भर करता है। पाश्चात्य विद्वानों में जेम्स ने धार्मिक अनुभूति को तर्कातीत जीवन स्वीकार है। आर्नेल्ड के अनुसार संवंग से संस्पर्शित नैतिकता ही धर्म है। इन धर्मशास्त्रियों के विचार से स्पष्ट है कि ईश्वरविहीन नैतिकता धर्म नहीं है, बल्कि केवल सामाजिक रीतियाँ है। सामाजिक रीतियों को नैतिकता नहीं, वरन् संस्कार या परंपरा कही जा सकती है। वास्तव में, नैतिकता का स्त्रोत अनन्त शक्ति के केंद्र (ईश्वर) से प्रभावित होता है और उसमें सभी जीवों का कल्याण निहित रहता है—सर्वभूतोहितेरताः। अतः इस कारण से भारतीय विचारकों ने नैतिक जीवन को धार्मिक अनुभूति का व्यवहार माना है।

ब्रैडले के अनुसार जब मनुष्य ईश्वर को केवल आदर्श नहीं मानता है बल्कि यथार्थ मानता है, उसी समय नैतिकता धर्म में निहित हो जाती है। देर्कात और लॉक ने नैतिकता का उद्भव ही ईश्वर को माना है। काण्ट ने नैतिक तर्कों के आधार पर ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध किया है, और नैतिकता की आवश्यक मान्यताओं में एक प्रमुख मान्यता ईश्वर को स्वीकार है। इस प्रकार नैतिकता धर्म में निहित है। जो धर्ममय है, वही नैतिक है। धर्म नैतिकता की अन्तर्वस्तु है और नैतिकता धर्म का बाह्यरूप है। इसलिए ये एक दूसरे से पृथक और स्वतंत्र नहीं हो सकते।

परंतु विचारकों का दूसरा वर्ग धर्म और नैतिकता के अपृथकत्व को अस्वीकारता है। उनके अनुसार ईश्वर की सत्ता में आस्ता नहीं होने पर भी मनुष्य नैतिक हो सकता है, क्योंकि धर्म और नैतिकता में कोई संबंध नहीं है। ऐसे विचारकों को मानना है कि ईश्वर विचार नैतिकता के मार्ग में बाधक है। धर्मा की मान्यता है कि मनुष्य ईश्वर का

[1] डॉ. एस. राधाकृष्णन, इंडियन फिलॉसफी, 1, पृ.52

[2] डॉ. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा, स्टडीज इन हिंदू पोलिटिकल थॉट एण्ड इट्स मेटाफिजिकल फाउन्डेशन, पृ.106

[3] ऋग्वेद 5.1.6.2

[4] डॉ. मिश्र एवं डॉ. अवस्थी, नीतिशास्त्र की भूमिका, पृ. 31

निमित मात्र है। वह जो कर्म करता है, ईश्वर द्वारा निर्धारित होता है। इसलिए मनुष्य अपने कर्मों को करने में भी स्वतंत्र नहीं है, इसलिए वह अपने कर्मों के प्रति उत्तरदायी भी नहीं होता। फलतः नैतिकता अर्थहीन हो जाती है। अतः धर्म और नैतिकता में अपृथकत्व माना जाय और धर्म का केंद्रबिंदु ईश्वर है, तो अनीश्वरवादी नैतिक नहीं हो सकता क्योंकि ईश्वर में विश्वास नहीं करने के कारण वह अधार्मिक और नास्तिक है। यह भी देखा गया है कि विश्व में ऐसे व्यक्ति पाये जाते हैं जो अधार्मिक और नास्तिक है, फिर भी वै नैतिक है। उनमें ऐसी नैतिकता होता है जो कभी-कभी धार्मिक व्यक्तियों में भी नहीं होता है। संभवतः इसलिए बुद्ध ने आत्मदीपोऽभवः की बात की, किसी धार्मिक परम सत्ता की नहीं।

अतः इन विचारकों ने धर्म के वास्तविक अर्थ को नहीं समझा है। धर्म का वास्तविक अर्थ होता है जो धारण किया जाय और जो उचित होता है, वही धारण करने योग्य है। इसलिए धर्म और नैतिकता में भिन्नता नहीं है। उचित का संबंध नैतिकता से है। ईश्वर का वास्तविक अर्थ पूर्णता या नित्य स्वतंत्रता है। इस दृष्टि से भी नैतिकता धर्म से पृथक नहीं है। जो नैतिकता धर्म से अलग होती है वह वास्तव में नैतिकता ही नहीं होता क्योंकि उसका पतन शीघ्रताशीघ्र हो जाता है। विश्व में प्रत्येक मनुष्य नैतिक और धार्मिक साथ-साथ है। जो नास्तिक व्यक्ति है, वह केवल नैतिक नहीं धार्मिक भी है। नैतिकताविहीन धर्म अंधा है, तो धर्मविहीन नैतिकता पंगु है। इसलिए धर्म और नैतिकता में अटूट संबंध है। परंतु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि धर्म और नैतिकता में कोई अंतर नहीं है। इन पदों में कई बिन्दुओं पर भिन्नता दिखता है।

धर्म का केंद्रबिंदु ईश्वर है। नैतिकता का केंद्रबिंदु मनुष्य है उसका आचरण है। यही कारण हैकि जहाँ धर्म में परम शान्ति का अनुभव होता है वहाँ नैतिकता में संघर्ष और विरोध पाया जाता है। दूसरे शब्दों में धर्म अभेद और एकत्व की भावना से जुड़ा है। नैतिकता का लक्ष्य शुभ की प्राप्ति है। अतः नैतिकता शुभ-अशुभ का भेद-बुद्धि कायम रखती है, अर्थात नैतिकता अभेदशून्य होती है। यही कारण है कि जहाँ धर्म व्यापक है, वहाँ नैतिकता सीमित है। धर्म के अंतर्गत सत्य, शुभ और सुंदर निहित है, तो नैतिकता इसी लोक तक सीमित है। इसलिए कहा जाता है कि धर्म अनन्त में प्रगतिशील है और नैतिकता अनन्त की ओर प्रगतिशील है। धर्म का आध्यात्मिक अनिवार्यता और शाश्वतता है तो नैतिकता का आधार मानवीय स्वतंत्रता है।

निष्कर्षत

धर्म और नैतिकता की इस भिन्नता के कारण ही आज अधिकांश विद्वान धर्म और नैतिकता को अलग-अलग देखते हैं। उनके अनुसार धर्म के साथ नैतिकता का दूर-दूर तक कोई संबंध नहीं है, और न ही नैतिकता के साथ धर्म का कोई लगाव है। परंतु भारतीय संदर्भ में धर्म और नैतिकता को एक दूसरे से अलग और स्वतंत्र रूप में नहीं देखा जा सकता है। यही कारण है कि भारतीय नीतिशास्त्र के अंतर्गत धर्म के दो रूप स्पष्टतः दिखाई पड़ती है—धर्म का धार्मिक स्वरूप, जिसे धर्म का बाह्य रूप भी कहा जा सकता है और धर्म का नैतिक स्वरूप, जिसे धर्म का आंतरिक स्वरूप भी कहा जा सकता है।

सहायक ग्रंथ सूची

1. भारतीय दर्शन की रूपरेखा, प्रो. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, मोतिलाल बनारसीदास, पटना संस्करण-1993
2. नीतिशास्त्र का आलोचनात्मक परिचय, मूल लेखक फ़िलिप हीलराइट, अनुवादक- मधुकर, सेन्ट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद, संस्करण-1953
3. भारतीय नीतिशास्त्र का इतिहास, डॉ. भीखनलाल आत्रेय, हिंदी समिति सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, प्रथम संस्करण-1964
4. नीतिशास्त्र, शांति जोशी, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, बनारस, प्रथम संस्करण-2013